NEERAJ®

M.H.D.-14

हिन्दी उन्यास–1

(प्रेमचन्द का विशेष अध्ययन)

Chapter Wise Reference Book
Including Many Solved Sample Papers

Based on

I.G.N.O.U.

& Various Central, State & Other Open Universities

By: Roma Rani

NEERAJ PUBLICATIONS
(Publishers of Educational Books)

Mob.: 8510009872, 8510009878 E-mail: info@neerajbooks.com
Website: www.neerajbooks.com

MRP ₹ 400/-

Content

हिन्दी उपन्यास–1

(प्रेमचन्द का विशेष अध्ययन)

Question Paper—June-2024 (Solved) 1-4
Question Paper—December-2023 (Solved) 1-5
Question Paper—June-2023 (Solved) 1-4
Question Paper—December-2022 (Solved) 1-4
Question Paper—Exam Held in March-2022 (Solved) 1-3
Question Paper—Exam Held in August-2021 (Solved) 1-6
Question Paper—Exam Held in February-2021 (Solved) 1-5
Question Paper—December, 2019 (Solved) 1-4
Question Paper—June, 2019 (Solved) 1-3
Question Paper—December, 2018 (Solved) 1-3
Question Paper—June, 2018 (Solved) 1-4
Question Paper—December, 2017 (Solved) 1-4
Question Paper—June, 2017 (Solved) 1-7

S.No.	Chapterwise Reference Book	Page

1. प्रेमचन्द का व्यक्तित्व एवं जीवन दृष्टि 1
2. प्रेमचन्द का साहित्य 13
3. प्रेमचन्द की साहित्यिक मान्यताएँ 30
4. प्रेमचन्द के उपन्यास और हिन्दी आलोचना 47
5. 'सेवासदन' : अन्तर्वस्तु का विश्लेषण 63
6. सेवासदन : शिल्प संरचना (औपन्यासिक शिल्प) 75
7. सेवासदन की नायिका (सुमन) 83
8. प्रेमाश्रम और कृषि-समस्या 94

9. प्रेमाश्रमयुगीन भारतीय समाज और प्रेमचन्द का आदर्शवाद 106

10. 'प्रेमाश्रम' का औपन्यासिक शिल्प 114

11. ज्ञानशंकर का चरित्र 132

12. 'रंगभूमि' और औद्योगीकरण की समस्या 143

13. 'रंगभूमि' पर स्वाधीनता आंदोलन और गाँधीवाद का प्रभाव 156

14. 'रंगभूमि' का औपन्यासिक शिल्प 169

15. सूरदास का चरित्र 178

16. 'गबन' और राष्ट्रीय आंदोलन 190

17. 'गबन' और मध्यवर्गीय समाज 199

18. 'गबन' का औपन्यासिक शिल्प 214

■■

Sample Preview of the Solved Sample Question Papers

Published by:

NEERAJ PUBLICATIONS

www.neerajbooks.com

QUESTION PAPER

June – 2024

(Solved)

हिन्दी उपन्यास–1 (प्रेमचन्द का विशेष अध्ययन) **M.H.D.-14**

समय : 2 घण्टे] *[अधिकतम अंक : 50*

नोट : *प्रथम प्रश्न अनिवार्य है। शेष में से किन्हीं तीन प्रश्नों के उत्तर दीजिए।*

प्रश्न 1. निम्नलिखित गद्यांशों में से किन्हीं दो की संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए–

(क) विचारों की स्वतंत्रता विद्या, संगीत और अनुभव पर निर्भर होती है। सदन इन सभी गुणों से रहित था। यह उसके जीवन का वह समय था, जब हमको अपने धार्मिक विचारों पर, अपनी सामाजिक रीतियों पर एक अभिमान-सा होता है। हमें उनमें कोई त्रुटि नहीं दिखाई देती, जब हम अपने धर्म के विरुद्ध कोई प्रमाण या दलील सुनने का साहस नहीं कर सकते, तब हममें क्या और क्यों का विकास नहीं होता।

उत्तर–संदर्भ–प्रस्तुत गद्यांश प्रेमचंद रचित उपन्यास 'सेवासदन' से लिया गया है। इसमें सदन के माध्यम से युवा वर्ग की मानसिक स्थिति को दर्शाया है, जब युवा पीढ़ी के विचार दूसरे लोगों, धर्म, समाज आदि से प्रभावित होते हैं।

व्याख्या–सदन युवा था, इस समय उसके विचार धर्म की बेड़ियों से जकड़े थे। विचारों की स्वतंत्रता, जो विद्या, संगीत और अनुभव से आती है, वह सदन में नहीं थी। इस समय उसका मन-मस्तिष्क अपने धार्मिक विचारों एवं रीतियों में बँधा हुआ था, उसे अपने विचार एवं निर्णय ही उचित लगते थे। उसे अपने धर्म में कोई कमी नहीं दिखाई देती थी। जब हम अपने धर्म के विरुद्ध कोई दलील सुनने को तैयार नहीं होते, तो हमारे अंदर तर्कबुद्धि का विकास नहीं हो पाता, जिससे हम यह पूछ सकें कि यह क्यों हुआ और कैसे हुआ तथा स्वतंत्र रूप से उस पर चिंतन कर सकें।

विशेष–1. भाषा भावपूर्ण, सरल, परंतु गंभीर है।

2. विचारात्मक शैली है।

3. विचारों की स्वतंत्रता न होने पर मन-मस्तिष्क कुंठित हो जाते हैं।

(ख) गायत्री-उन देशों की बात न चलाइए, वहाँ के लोग तो विवाह को केवल सामाजिक संबंध समझते हैं। आपने ही एक बार कहा था कि वहाँ कुछ ऐसे लोग हैं जो विवाह-संस्कार को मिथ्या समझते हैं। उनके विचार में स्त्री-पुरुषों की अनुमति ही विवाह है, लेकिन भारतवर्ष में कभी इन विचारों का आदर नहीं हुआ।

उत्तर–संदर्भ–प्रस्तुत पंक्तियाँ प्रेमचंद के उपन्यास 'प्रेमाश्रम' से ली गई हैं। गायत्री द्वारा पश्चिमी देशों एवं भारत में विवाह संबंधों के अंतर को समझाया गया है।

व्याख्या–गायत्री का मानना है कि पश्चिम के देशों में विवाह को केवल सामाजिक बंधन माना जाता है। वहाँ विवाह संस्कार को ढकोसला मात्र समझा जाता है। विवाह उनके लिए परिवार, समाज और परस्पर संबंधों को जोड़ने वाला पवित्र संस्कार न होकर मात्र एक बंधन है, जिसे वे कभी भी तोड़कर किसी और से जोड़ना उचित समझते हैं। पश्चिम के लोगों के विचार में विवाह मात्र स्त्री-पुरुष की आपसी सहमति है, इसमें भावना, धर्म, संस्कार, नैतिकता का कोई स्थान नहीं है। किंतु भारत की स्थिति वहां से अलग है। भारत में विवाह एक धार्मिक, सामाजिक, नैतिक, पारिवारिक एवं वैचारिक संस्कार है। जो दो लोगों के साथ परिवार और समाज को जोड़ता है और विवाह बंधन को भारत में पश्चिम की तरह तोड़ देना सरल नहीं है। भारत आज भी पश्चिम के विवाह संबंधी विचारों से प्रभावित नहीं है।

विशेष–1. तुलनात्मक शैली में पश्चिमी देशों और भारत की संस्कृति की तुलना कर भारत की सांस्कृतिक श्रेष्ठता को अभिव्यक्त किया गया है।

2. भाषा संवादात्मक है।

(ग) जीवन-सूत्र कितना कोमल है। वह क्या पुष्प से कोमल नहीं, जो वायु के झोंके सहता है और मुरझाता नहीं? क्या वह लताओं से कोमल नहीं, जो कठोर वृक्षों के झोंके सहती और लिपटी रहती हैं? वह क्या पानी के बबूलों से कोमल नहीं, जो जल की तरंगों पर तैरते हैं और टूटते नहीं? संसार में और कौन-सी वस्तु इतनी कोमल इतनी अस्थिर, इतनी सारहीन है जिससे एक व्यंग्य, एक कठोर शब्द, एक अन्योक्ति भी दारुण, असह्य, घातक है।

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

उत्तर–संदर्भ–प्रस्तुत गद्यांश प्रेमचंद के उपन्यास 'रंगभूमि' से लिया गया है। विनय द्वारा स्वयं को मार लेने पर वहाँ उपस्थित जनता की मनोस्थिति के साथ जीवन की क्षणभंगुरता पर प्रकाश डाला गया है।

व्याख्या–जीवन-सूत्र अत्यंत कोमल है अर्थात् यह जीवन क्षणभंगुर है। जिस जीवन पर हम इतना अभिमान करते हैं भविष्य की योजनाएँ बनाते हैं, वह जीवन तो उस पुष्प से भी ज्यादा कोमल है, जो डाल पर वायु के झोंके सहने पर भी नहीं गिरता और मुरझाता भी नहीं है, जबकि जीवन एक क्षण में समाप्त हो जाता है। यह जीवन उन कोमल लताओं से भी अधिक कोमल है, जो कठोर वृक्ष से लिपटने के बाद भी हरी-भरी रहती हैं और बढ़ती रहती हैं। पानी के बुलबुले भी जीवन से अधिक मजबूत हैं, जो जल की तरंगों पर तैरते रहते हैं, परंतु टूटते नहीं हैं अर्थात् जीवन क्षणभंगुर है, वह हल्की-सी चोट से भी समाप्त हो सकता है।

विशेष–1. दार्शनिकता का भाव है।

2. सरलता से जीवन की निस्सारता को समझाया गया है।

3. भाषा सरल सहज है।

(घ) जीवन क्या, एक दीर्घ तपस्या थी, जिसका मुख्य उद्देश्य कर्त्तव्य का पालन था? क्या तन उनका जीवन सुखी न बना सकती थी? क्या एक क्षण के लिए कठोर कर्त्तव्य की चिंताओं से उन्हें मुक्त न कर सकती थी? कौन कर सकता है कि विराम और विश्राम से यह बुझने वाला दीपक कुछ दिन और न प्रकाशमान रहता। लेकिन उसने कभी अपने पति के प्रति अपना कर्त्तव्य ही न समझा।

उत्तर–संदर्भ–प्रस्तुत गद्यांश प्रेमचंद के उपन्यास 'गबन' से लिया गया है। वकील साहब की बीमारी से मृत्यु होने पर रत्न अपने मन में सोच रही थी कि उसने अपने पति के साथ कैसा व्यवहार किया। भौतिक वस्तुओं की आकांक्षा ने उसे उसके कर्त्तव्य एवं पति के प्रेम से दूर रखा।

व्याख्या–रत्न को पति की मृत्यु के बाद अनुभव हुआ कि जीवन एक दीर्घ तपस्या की तरह है, जिसका मुख्य उद्देश्य अपने कर्त्तव्य का पालन करना है। मेरे पति दिन-रात मेहनत कर मेरे जीवन को सुखी बनाने का प्रयत्न करते थे और मैं उनकी सेवा करने की जगह इधर-उधर घूमने, सिनेमा देखने जैसे कार्यों में समय नष्ट करती थी। यदि मैंने अपने पति की देखभाल की होती तो शायद वे आज जीवित होते और लंबा जीवन जीते। मैंने कभी अपने पति के प्रति अपना कर्त्तव्य नहीं निभाया।

विशेष–1. प्रश्न शैली है।

2. जीवन की असारता और कर्त्तव्य पालन पर विचार किया गया है।

प्रश्न 2. ''प्रेमचन्द अपने विचारों में अत्यन्त प्रगतिशील और मानवधर्मी थे।'' इस कथन पर तर्कसंगत विचार कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-1, पृष्ठ-10, प्रश्न 3

प्रश्न 3. ज्ञानशंकर की चारित्रिक विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

उत्तर–ज्ञानशंकर प्रेमशंकर का अनुज एवं प्रभाशंकर का भतीजा है। वह अत्यन्त ही महत्त्वाकांक्षी है। उसके महत्त्वाकांक्षी मन में "भावी उन्नति की अभिलाषाएँ हैं। चैन से जीवन व्यतीत हो, यही उसका ध्येय है।"

इसके लिए चाहे उसे दूसरों के चैन को ही क्यों न छीनना पड़े। दूसरों के सुख-दु:ख से उसे कोई वास्ता नहीं है, अपने लक्ष्य को ही साधना चाहता है उसके लिए साधन भले कुछ भी हो। अपने को सुख-साधन सम्पन्न बनाने हेतु वह अपने पिता तुल्य चाचा प्रभाशंकर से बँटवारा कर लेता है। भाई प्रेमशंकर से लखनपुर की जमींदारी अपने नाम करवा लेता है। अपनी बहन समान साली गायत्री से प्रेम का स्वांग भरता है। पिता समान श्वसुर राय कमलानंद को जहर दे देता है और गाँव के किसानों पर तरह-तरह के अत्याचार करता है जैसे–इजाफा, लगान, बेगार, नजराना, उनकी झोंपड़ियों में आग लगवाना आदि और इसी महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति हेतु अपने पुत्र का भी प्रयोग करना चाहता है। इन सब हथकंडों द्वारा वह अपनी महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति में कुछ हद तक सफल भी होता है लेकिन अंत में हार ही होती है। उसका पुत्र मायाशंकर अपने सभी जमींदारी अधिकारों का त्याग कर सब कुछ गाँव वालों को सौंप देता है तब वह भाग्यवादी बन जाता है। तब वह चिन्तन करता है–

"हा वैभव लालसा! तेरी बलिवेदी पर मैंने क्या नहीं चढ़ाया? अपना धर्म अपनी आत्मा तक भेंट कर दी।... मैं समझता था, मैं स्वयं अपना भाग्य विधाता हूँ। विद्वानों ने भी ऐसा कहा है, पर आज मालूम हुआ कि मैं उसके हाथों का खिलौना था।... मनुष्य कितना दीन, कितना परवश है? भावी कितनी प्रबल, कितनी कठोर।"

और उसकी यही महत्त्वाकांक्षा उसे अंत में इतना दुर्बल बनाती है कि वह आत्महत्या के पथ पर अग्रसर होता है। जीवन के अंतिम क्षणों में अपने दुर्व्यसनों के प्रति उसे ग्लानि होती है और वह चिन्तन करता है–

"जो तिमंजिला भवन मैंने एक युग में अविश्रान्त उद्योग से खड़ा किया, वह क्षण मात्र में इस भाँति भूमिस्थ हो गया, मानो उसका अस्तित्व ही न था, उसका चिह्न तक दिखाई नहीं देता।... विषय-लिप्सा तूने मुझे कहीं का न रखा।... इसके बिना भी आदमी सुखी रह सकता है, बल्कि सच पूछो तो सुख इनसे मुक्त रहने में ही है।"

प्रश्न 4. 'रंगभूमि' का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-12, पृष्ठ-153, प्रश्न 4

प्रश्न 5. 'गबन' के औपन्यासिक शिल्प का विश्लेषण अपने शब्दों में लिखिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-18, पृष्ठ-218, प्रश्न 1, पृष्ठ-221, प्रश्न 5

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

Sample Preview of The Chapter

Published by:

NEERAJ PUBLICATIONS

www.neerajbooks.com

हिन्दी उपन्यास–1
(प्रेमचन्द का विशेष अध्ययन)

प्रेमचन्द का व्यक्तित्व एवं जीवन दृष्टि

1

प्रेमचन्द का जीवन/व्यक्तित्व

प्रेमचन्द बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उनका व्यक्तित्व सादगी से परिपूर्ण किन्तु असाधारण था। उनका जन्म 31 जुलाई, 1881 को,काशीकेनिकट'**लमही**'नामकगावंमेंएककायस्थपरिवार में हुआ था। यह वह समय था जब भारत परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था किन्तु स्वतंत्रता की चाह भी अब भारतीय दिलों में हिलोरें लेने लगी थी, क्योंकि प्रेमचन्द के जन्म के कुछ ही समय पश्चात् 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हुई। प्रेमचन्द केबचपनकाबोलतानाम'**नवाब**'एवंस्कूलीनाम'**धनपतराय**' था। इनके पिता का नाम अजायब लाल एवं माता का नाम आनन्दी देवी था।

प्रेमचन्द का जीवन, एक औपनिवेशिक शासन में जीवित आम भारतीय आदमी के ही समान था। उनकी वेश-भूषा, खान-पान आदिसभीकुछएकसाधारणजनजैसाथा।उनकेपुत्र**अमृतराय** ने उनके इस सादगीपूर्ण व्यक्तित्व को अपने इन शब्दों द्वारा अभिव्यक्त किया है–

"प्रेमचन्दकीसरलतासहजहै।उसमेंकुछतोइसदेशकी पुरानी मिट्टी का संस्कार है, कुछ उसका नैसर्गिक शील है, संकोच है, कुछ उसकी गहरी जीवन-दृष्टि है और कुछ उसका सच्चा आत्म-गौरव है, जो किसी तरह के आत्म-प्रदर्शन या विज्ञापन को उसकेनजदीकघटियाबनादेताहै।"

उनके व्यक्तित्व की यह सादगी उनके द्वारा रचित साहित्य में सर्वत्र छिटकी पड़ी है। उनके इस सादगीपूर्ण एवं असाधारण व्यक्तित्व का निर्माण जिस परिवेश में हुआ, उसको जाने बिना उनके व्यक्तित्व की इस चमक को समझ पाना कठिन होगा।

प्रेमचन्द का जन्म एक खाते-पीते साधारण मध्यमवर्गीय कृषक परिवार में हुआ, किन्तु उनके पिता कृषि से जीविकोपार्जन करने में असमर्थ रहे, फलतः वे पोस्ट मास्टर हो गए। प्रेमचन्द के जन्म के समय वे इस नौकरी द्वारा 20 रु. महावार पाते थे और गांव वालों की चिट्ठियाँ आदि लिख देने के बदले, उन्हें अनाज, दूध, सब्जियाँ आदि भी भेंट स्वरूप मिल जाया करते थे। कुल मिलाकर अजायब लाल की आर्थिक स्थिति अच्छी थी। प्रेमचन्द के जीवन के दुःखद पक्ष का आरम्भ उस समय होता है, जब उनकी माता आनन्दी देवी का देहान्त (1889) हो जाता है, तब वे मात्र सात वर्ष के थे। यह दुःख तब और भी कष्टकारक हो जाता है, जब उनके पिता अजायबलालनेदूसराविवाहकरलिया।स्वयं**धनपतराय** के शब्दों में-

''मेरेपिताजीवन-पथपरबहुतसंभलकरचले,परअंतिम दिनोंमेंलड़खड़ागए।''

जैसा कि अक्सर एक विमाता के आने पर होता है, प्रेमचन्द को भी विमाता की उपेक्षा का शिकार होना पड़ा। उन्होंने अपने इस दुःख का साथी उर्दू साहित्य को बना लिया, तब वे गोरखपुर के मिशन स्कूल में तीसरी कक्षा के विद्यार्थी थे। इस छोटी-सी उम्र में उन्होंने तमाम उर्दू लेखकों, यथा–पं. रतननाथ सरशार, मौलवी मुहम्मद अली, मौलाना शाह आदि द्वारा रचित साहित्य को पढ़ा। इसकेसाथहीं**रे नाल्ड**केउपन्यासोंकेअनुवाद,'तिलिस्मेहोशरुबा' आदि के कई खण्डों को भी पढ़ा। इस तरह प्रेमचन्द ने अपने जीवन की कड़वाहट को कम करने का प्रयास किया। इस काल का एक सुखद पहलू भी था और वह यह था कि इस अध्ययन ने उनके लेखन की नींव रखी।

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

जहाँ प्रेमचन्द के पिता द्वारा दूसरा विवाह किया जाना उनकी एक बड़ी भूल थी, वहीं इससे भी बड़ी भूल थी अपनी नयी पत्नी के कहने पर मात्र 15 वर्ष की उम्र में प्रेमचन्द का विवाह कर देना। अपने इस विवाह से प्रेमचन्द संतुष्ट न थे, क्योंकि उनकी पत्नी कुरूप होने के साथ-ही-साथ कर्कश व्यवहार की भी थी जो कि उनके चित्तानुकूल न था। फलतः उनका यह विवाह असफल रहा। उनके विवाह के कुछ समय पश्चात् 1897, में पिता अजायब लाल का देहान्त हो गया, लड़कपन की उम्र में उन्हें घर चलाने की चिन्ता करनी पड़ी। तब वे बनारस के क्वीन्स कॉलेज में नवीं कक्षा के छात्र थे और उनके परिवार में दो सौतेले भाई, सौतेली माँ एवं स्वयं की पत्नी थी। इस विकट स्थिति में काशी में ट्यूशन पढ़ा कर अपना गुजारा करने लगे, साथ ही अपनी पढ़ाई को भी जारी रखा। कमी पड़ जाने पर उधार भी लिया जाता था। किसी तरह से उन्होंने नवीं कक्षा पास की एवं फीस माफ करवाकर 1898 में मैट्रिक की परीक्षा भी द्वितीय श्रेणी में पास की। चूंकि मैट्रिक की परीक्षा द्वितीय श्रेणी में पास की थी, इसलिए इन्टर कॉलेज की फीस माफ नहीं हो सकी। अतः क्वीन्स कॉलेज में उनका दाखिला नहीं हो सका। आय का कोई साधन नहीं होने के कारण प्रेमचन्द को पुनः ट्यूशन एवं उधार का सहारा लेना पड़ा। उनके एक सहपाठी ने पाँच रुपए महावार पर एक वकील के बच्चे को पढ़ाने का काम दिलवा दिया था। उन पाँच रुपयों में से वे तीन रुपए परिवार को भेजते थे और दो अपनी गुजर-बसर के लिए रखते थे। दो रुपये में अपनी गुजर-बसर कठिन थी। इसलिए कई बार उन्हें फाके भी करने पड़ते थे। एक बार दो दिन तक भूखा रहने के पश्चात् वे अपनी गणित की दो रुपये की एक पुस्तक आधी कीमत में बेचने के लिए एक पुस्तक विक्रेता के पास गए वहाँ उनकी एक अनजान व्यक्ति से भेंट हुई। वह अनजान व्यक्ति प्रेमचन्द की दयनीय अवस्था को देख अत्यन्त द्रवित हुआ और उसने प्रेमचन्द से पूछा,

मैट्रिकुलेशन पास हो?

'जी हाँ।'

'नौकरी करने की इच्छा तो नहीं है।' प्रश्न हुआ।

''नौकरी कहीं मिलती नहीं।'' प्रेमचन्द ने उत्तर दिया।

यह अजनबी चुनारगढ़ के मिशनरी स्कूल का हेडमास्टर था। उसे अपने विद्यालय में शिक्षक की आवश्यकता थी, जो कि उसे प्रेमचन्द के रूप में प्राप्त हुआ। प्रेमचन्द से उन्होंने कहा कि वह 18 रुपए मासिक की उन्हें नौकरी दे सकता है। इस प्रकार 1898 में ही प्रेमचन्द को चुनारगढ़ के मिशनरी स्कूल में अध्यापक की नौकरी प्राप्त हो गई। अब वे चुनारगढ़ में ही रहते और छुट्टियों में ही घर आते। हालांकि उनका वेतन समयानुसार संतोषजनक था, किन्तु इसी में ही परिवार का खर्च और अपना गुजर करना कठिन था, इसलिए ट्यूशन पढ़ाने एवं उधार लेने का क्रम जारी रहा। किन्तु, उनकी यह नौकरी ज्यादा दिनों तक टिकी नहीं रही। इस नौकरी के छूटने का कारण एक फुटबॉल मैच था, जो उनके स्कूल की टीम और मिलिटरी के अंग्रेजों की टीम के बीच था, इसमें उन्होंने अपने छात्रों के साथ मिलकर अंग्रेजों की पिटाई कर दी थी। अतः अपने स्वाभिमानी व्यक्तित्व के चलते इस घटना के साल भर के भीतर ही उन्होंने यह नौकरी छोड़ दी। लेकिन जल्द ही उन्हें बहराइच में एक सरकारी विद्यालय में नौकरी मिल गई। बहराइच से उनका तबादला प्रतापगढ़ को हुआ। इस क्रम में उनकी आर्थिक तंगहाली की स्थिति ज्यों-की-त्यों बनी रही। इस तंगहाली के बावजूद भी जिन्दगी कुछ संतोषजनक रही और पढ़ने के साथ-साथ लिखने का क्रम भी जारी हो गया।

1902 के आसपास, जब संपूर्ण उत्तर भारत में सामाजिक-सांस्कृतिक आंदोलन का जोर था, जब बाल गंगाधर तिलक, विवेकानन्द, दयानन्द सरस्वती आदि अपने-अपने ढंग से इसमें योगदान दे रहे थे तभी प्रेमचन्द पर दयानन्द सरस्वती के 'आर्य समाज' का विशेष प्रभाव पड़ा, क्योंकि आर्य समाज के विचार बाल विवाह, विधवा विवाह, अनमेल विवाह, जाति प्रथा आदि विषय पुनर्जागरण के अनुकूल थे। अतः प्रेमचन्द आर्य समाज की सभाओं में जाने के साथ-साथ इसके सदस्य भी बन गए। इसी बीच इनको 1902 में इलाहाबाद के मॉडल ट्रेनिंग स्कूल में उच्चतर प्रशिक्षक के लिए चुन लिया गया। 1904 में, प्रशिक्षक की परीक्षा पास करके पढ़ाने की उपाधि पाई और साथ ही उर्दू-हिन्दी में ओरियंटल इलाहाबाद विश्वविद्यालय का विशेष वर्नाक्युलर इम्तिहान भी पास किया।

अध्यापक के रूप में प्रेमचन्द का एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थानान्तरण होता रहा। इसके साथ-ही-साथ उनका लिखने का क्रम भी जारी रहा। छोटी-मोटी पत्रिकाओं में उनकी रचनाएँ **'नवाब राय'** के नाम से प्रकाशित हो चुकी थीं यह नाम उनके बचपन का घर का नाम था। इसी बीच स्थानान्तरण के क्रम में उनका स्थानान्तरण 1905 ई0 में कानपुर में हो गया। यहाँ आकर लिखना उनके जीवन का उद्देश्य एवं नियम बन गया। भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक पुनर्जागरण से संबंधित आन्दोलनों ने उनके सामने लिखने के लिए विषयों की बाढ़ लगा दी थी। 1905 से कुछ समय पूर्व ही कानपुर से **'जमाना'** नामक पत्रिका की शुरुआत हुई थी। इस पत्रिका के सम्पादक **दयानारायण निगम** थे। कानपुर आने से पूर्व प्रेमचन्द इनके साथ पत्राचार किया करते थे और आगे चलकर दोनों अच्छे दोस्त हो गए। कानपुर पहुंचने के पश्चात् वे 'ज़माना' के कर्मचारियों का ही एक हिस्सा बन गए। 'ज़माना' में भी उन्होंने **'नवाबराय'** के नाम से कहानियाँ, साहित्यिक टिप्पणियाँ आदि के लेखन का कार्य आरम्भ किया। यहीं से 1906 में उनका पहला संपूर्ण उपन्यास **'हमखुर्मा-ओ हमसवाब'** प्रकाशित हुआ।

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

अगलेहीवर्षइसकाहिन्दीअनुवाद**'प्रेमा'**केनामसेहुआ। अनुवाद प्रेमचन्द ने संभवत: स्वयं ही किया।

प्रेमचन्द स्वभाव से बहुत ही खुशमिजाज एवं जिन्दादिल इन्सान थे। जोर से ठहाके लगाकर हँसना उनके व्यक्तित्व की एक विशिष्टताथी।प्रेमचन्दकोजाननेवालेलोगोंकेकथनानुसार–'वैसा ठहाका शायद ही कोई लगा पाता था। जब वे उन्मुक्त भाव से हँसते थे, तो कमरे के मकड़ों के जाले तक काँप उठते और बाजार में चलतेलोगइधर–उधरताकनेलगते।''**कानपुर** काउनकाजीवन जितनाही**सहज**एव**सुखद**था।**'लमही**'आनेपरउनकाजीवन उतनाही**कठिन**एव**दु:खद**होजाताथा–उनकेपुत्र**अमृतराय**के शब्दोंमेंही–"कानपुरकीजिन्दगीअगरस्वर्गथी,तोघरकीवह जिन्दगीनरक....।"विवाहितहोकरभीवेदाम्पत्यसुखसेवंचित थे। लगभग 25 वर्ष तक यह स्थिति चलती रही। अन्तत: 1906 में उन्होंनेबालविधवा**शिवरानी देवी**सेविवाहकरलियाऔर इसके साथ ही उनके जीवन में एक नये अध्याय की शुरुआत हुई। यह विवाह उनके लिए सुखद रहा। लेखन कार्य में गति आ गई, प्रेमचन्द की लेखनी ने देश की बन्दी, किन्तु अपराजेय आत्मा को वाणी दी। वे 1905 से 1909 तक कानपुर में ही रहे और यह वह समय था, जब देश में स्वदेशी आन्दोलन की लहर थी। 'गरम दल' एवं बाल गंगाधर तिलक का चारों ओर शोर था। प्रेमचन्द वैचारिक दृष्टिकोण से तिलक के समर्थक थे।

इसके बाद 1909 में इनका स्थानान्तरण हमीरपुर हो गया, जहाँ ये विद्यालयों के सब–डिप्टी इंस्पेक्टर नियुक्त हुए। हमीरपुर ही वह स्थान था जहाँ वे नवाबराय से प्रेमचन्द हो गए। घटना कुछ इस प्रकारहुई–हमीरपुरआनेसेपूर्वहीउनका**'सोजे वतन'**1908में प्रकाशित हो चुका था, जिसमें देशप्रेम से संबंधित कहानियाँ थीं और उन दिनों देशप्रेम को देशद्रोह समझा जाता था। किसी तरह अंग्रेज सरकार को यह जानकारी प्राप्त हो गई कि 'सोजे वतन' के लेखक**नवाबरायधनपतराय**हीहैं।परिणामस्वरूप,किसीप्रकार नौकरी तो बच गई लेकिन सरकार ने उनकी लेखनी पर पाबन्दी लगा दी। लेकिन ये वो लेखनी न थी जो किसी के रोके रुकती। एकतरफजहाँ**नवाबराय**काअन्तहुआवहीं**प्रेमचन्द**काजन्म हुआ।

हमीरपुर में ही वे पेचिश का शिकार हुए जो उनकी जीवन लीला के अन्त पर ही समाप्त हुआ। 1914 में इनका स्थानान्तरण बस्ती कर दिया गया। लेकिन स्वास्थ्य में कुछ खास सुधार न हुआ, तब इन्होंने लखनऊ, काशी तथा इलाहाबाद में अपना इलाज करवाया। खराब स्वास्थ्य के कारण निरीक्षक के पद पर बने रहना प्रेमचन्द के लिए संभव न था। अत: अपने काम में परिवर्तन की माँग की जिसे स्वीकार कर सरकार ने इन्हें बस्ती हाई स्कूल में नियुक्त कर दिया। इसी क्रम में इतना सब होने पर भी इन्होंने 1916 में एफ.ए. की परीक्षा पास की। इन्हीं दिनों बस्ती में ही इनकी मुलाकाततहसीलदार**मन्नन द्विवेदी**सेहुई,जिनकीप्रेरणासेइन्होंने हिन्दी में लिखना शुरू किया। कानपुर के 'प्रताप' और इलाहाबाद की 'सरस्वती' में उनकी रचनाएँ नियमित रूप से प्रकाशित होने लगीं।

बस्ती से इनका स्थानान्तरण गोरखपुर हुआ। यहाँ की आबोहवा इन्हें कुछ रास आई। यहीं पर प्रेमचन्द प्रसिद्ध देशभक्त, समाजसेवी एवंसाहित्यकार**महावीर प्रसाद पोद्दार**सेमिले।इनकीपुस्तक 'एजेन्सी' नामक प्रकाशन संस्था, कलकत्ता में थी। इन्हीं के सहयोग सेइनकापहलाहिन्दीकहानीसंग्रह**'सप्तसरोज'**प्रकाशितहुआ। तत्पश्चात्इनकेउपन्यास**'बाजारे हुस्न'**काहिन्दीरूपान्तरण **'सेवासदन'**प्रकाशितहुआ।इसप्रकार**महावीर प्रसाद पोद्दार**ने उर्दू से हिन्दी लेखन में अग्रसर होने में इनकी सहायता की।

इसी क्रम में इन्होंने उपन्यास लेखन की ओर प्रेरित हो **'गांशाए–आफियत'**कीरचनाकीजिसका**हिन्दी रूपान्तरण 'प्रेमाश्रम'**केनामसेप्रकाशितहुआ।इसलेखनकार्यकेक्रममें ही इन्होंने बी.ए. की परीक्षा भी पास की। इसी काल में इन्होंने हिन्दी कहानी लेखन की ओर भी ध्यान दिया। हिन्दी में लिखी हुई इनकीपहलीकहानी**'सौत'**थीजिसकाप्रकाशन'सरस्वती' पत्रिका में, दिसम्बर 1915 के अंक में हुआ। इसके साथ ही हिन्दी कहानी लेखन का जो क्रम शुरू हुआ वह आजीवन चलता रहा। इसका अर्थ यह कदापि नहीं था कि उन्होंने उर्दू लेखन को छोड़ दिया। उर्दू से हिन्दी में और हिन्दी से उर्दू रूपान्तरण का कार्य साथ–साथ चलता रहा जिसके बहुत से उदाहरण हैं। 'सेवासदन' और 'प्रेमाश्रम' के हिन्दी रूपान्तरण के बाद उर्दू में प्रेमचन्द ने 1922 में 'चौगाने हस्ती' नाम से उपन्यास लिखना शुरू किया जो 1924 में पूरा हुआ। इसका हिन्दी रूपान्तरण 1925 में 'रंगभूमि' के नाम से प्रकाशित हुआ। ऐसा नहीं कि प्रेमचन्द ने सभी उपन्यास मूलत: उर्दू में लिखे, उन्होंने मूलत: हिन्दी में भी उपन्यास लेखन का कार्य किया। हिन्दी में मूल रूप से लिखित उनका प्रथम उपन्यास 'कायाकल्प' (1926) प्रकाशित हुआ। इसके बाद तो एक के बाद एक इनके हिन्दी उपन्यास आए, यथा–निर्मला (1927), प्रतिज्ञा (1929), गबन (1931), कर्मभूमि (1932), गोदान (1936), मंगलसूत्र उनका अधूरा उपन्यास है जो कि इनकी मृत्यु के पश्चात् 1948 में प्रकाशित हुआ।

उनके इस अद्भुत लेखन का क्रम तब शुरू हो सका जब उन्होंने 16 फरवरी, 1921 को अपने सरकारी पद से त्यागपत्र दे दिया। यह घटना गांधीजी के प्रभाव में आने का परिणाम था। वे 1920–21 में गांधीजी द्वारा चलाये गए असहयोग आन्दोलन से बेहद प्रभावित हुए थे। इस त्यागपत्र से उनके जीवन में एक बार फिर जीविकोपार्जन के प्रश्न के साथ संघर्ष की शुरूआत हुई। प्रेमचन्द

www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

ने पोद्दारजी के गांव के घर में जाने का मन बना लिया और वे उनके साथ गांव चले गए। कपड़े बनाने का काम शुरू कर चर्खे बनाने की दुकान भी खोली। लेकिन यह कार्य-व्यापार उनके मनोनुकूल न था। फलत: प्रेमचन्द कानपुर के मारवाड़ी विद्यालय में प्रधानाध्यापक हो गए, लेकिन मैनेजर से अनबन के कारण इन्होंने इस्तीफा दे दिया। इसके बाद इन्होंने एक के बाद एक-दो-तीन नौकरी की और छोड़ी, तत्पश्चात् लमही में घर बनाने का काम शुरू किया। इसी बीच प्रेमचन्द तीन संतानों के पिता बने। जिनमें उनकीपहलीसंतानकाजन्म**श्रीपतराय**केरूपमें1916में, दूसरीसंतानकाजन्म**मन्नू**केरूपमें1920मेंहुआ,इसका जीवन-काल मात्र 11 महीने था, इनकी तीसरी संतान का जन्म **अमृतराय**केरूपमें1922मेंहुआ,जबवेमारवाड़ीहाईस्कूल के प्रधानाध्यापक थे।

1922 में प्रेमचन्द लमही में अपने घर को बनाने का काम शुरूकरचुकेथे।बहुतदिनोंसेवेअपनी**प्रेस**लगानेकास्वप्न संजोये थे जो कि साकार रूप 20 जुलाई, 1923 को ले सका। प्रेमचन्दनेअपनीप्रेसकानाम'**सरस्वती प्रेस**'रखा।इसका उद्घाटन**छविनाथ मिश्र** नेचक्काघुमाकरकिया।लेकिनप्रेस लगाना उन्हें रास न आया। प्रेस से मुनाफे की बजाय नुकसान होने लगा। अपने एक पत्र में प्रेमचन्द ने प्रेस की बुरी हालत का जिक्र करतेहुए**निगम जी**कोलिखाथा–

"मेरीप्रेसकीहालतअच्छीनहीं।सालभरहोगए,नफाऔर सूदतोदरकिनार,कोई600रु.काघाटाहै।"

प्रेसकेमैनेजर**महताब राय**,जोकिउनकेसौतेलेभाईथे, प्रेस का प्रबंधन ठीक से नहीं कर पाये। प्रेस के हिस्सेदार तगादा करने लगे थे, अब उनके सामने एक यही राह थी कि नौकरी करके इस कर्ज को निपटाया जाए। अपने इस विचार को कार्य रूप देने में उन्होंने जरा भी देरी न करते हुए अगस्त, 1924 को लखनऊ में गंगा पुस्तक माला के साहित्यिक सलाहकार का पद संभाला। इसी काल में उन्होंने चौगाने हस्ती (रंगभूमि) की रचना की जोकि 1925 में गंगा पुस्तकमाला से ही प्रकाशित हुई, किन्तु कुछ समय पश्चात् उन्होंने यह नौकरी छोड़ दी। दो वर्ष बनारस में रहने के बाद उन्होंने लखनऊ से नवल किशोर प्रेस द्वारा प्रकाशित 'माधुरी' नामक पत्रिका का संपादन भार संभाला । यहीं उनकी भेंट लेखक जैनेंद्र से भी हुई।

इधर प्रेस की हालत में कोई सुधार न देखकर उन्होंने अपने सौतेले भाई महताब राय से इसका प्रबंधन भार वापस लेकर प्रवासी लाल वर्मा को सौंप दिया। प्रवासी लाल जी के प्रबंधन में प्रेस की हालत में कुछ सुधार नजर आया। इन्हीं के काल में 10 मार्च 1930 को 'हंस' का पहला अंक 'सरस्वती प्रेस' से प्रकाशित हुआ। हालांकि प्रेमचन्द ने अपने प्रेस के हिस्सेदारों का कर्ज चुका दिया जिससे प्रेस उनकी अपनी हो गई लेकिन 'हंस' के प्रकाशन से उनकी समस्याएं हल नहीं हुईं। उधर दूसरी ओर 10 मार्च, 1931 कोनवलकिशोरप्रेसकेमालिक**बिशन नारायण भार्गव**का देहान्त हो गया। प्रेमचन्द को उनकी इच्छा के विरुद्ध सम्पादकीय दायित्व से मुक्त कर पुस्तक विभाग भेज दिया गया, जहाँ उनका कार्य पाठ्य-पुस्तक समिति की स्वीकृति के लिए पुस्तकें लिखना था। लेकिन समिति के सदस्यों से उनकी निभ नहीं पाई और अन्तत: उन्हें नवलकिशोर प्रेस को अलविदा कहना पड़ा। इधर प्रेस की स्थिति में कुछ खास सुधार न था। 'हंस' भी घाटे में चल रहा था।इन्हींदिनों**विनोद शंकर व्यास**ने'जागरण'नामकएक साप्ताहिक पत्र आरंभ किया था, लेकिन उसे मजबूरन उन्हें बन्द करना पड़ा। उन्होंने इस पत्र को प्रेमचन्द को सौंपने का प्रस्ताव रखा। प्रेमचन्द के मन में भी एक साप्ताहिक पत्र निकालने की योजना थी, अत: उन्होंने इसे यह जानते हुए भी स्वीकार कर लिया कि इससे कठिनाइयाँ बढ़ेंगी ही और उम्मीद के मुताबिक कठिनाइयाँ बढ़ भी गईं। उनकी इस समय की स्थिति का ज्ञान, उनके द्वारा **बनारसी दास चतुर्वेदी**कोलिखेपत्र,द्वाराहोताहै।

अब उन पर 'हंस' एवं 'जागरण' दो पत्रों को चलाने का दायित्व था, किन्तु पूँजी के अभाव ने समस्याएं उत्पन्न कर दीं। कागजों के बिल एवं कर्मचारियों के बकाया वेतन ने इस संकट को और गहरा दिया। इस घोर संकट के समय में एक आशा की किरण तब नजर आई जब बम्बई के एक फिल्म निर्माता ने उनके उपन्यास 'सेवासदन' पर फिल्म बनाने का प्रस्ताव उनके पास भेजा। प्रेमचन्द ने मजबूरी में मात्र 750 रु. में फिल्म बनाने का अधिकार उन्हें सौंप दिया। कुछ समय पश्चात् बम्बई की एक फिल्म कम्पनी, 'अजन्ता सिनेटोन' ने उन्हें 700 रुपये महावार पर अपने यहाँ नियुक्त करना चाहा। 'हंस' एवं 'जागरण' पत्रों को चलाने के लिए प्रेमचन्द को यह प्रस्ताव आकर्षक लगा। इस तह प्रेमचन्द 1934 में बम्बई पहुंच गए, किन्तु यह कार्य भी इतना सहज न था, क्योंकि फिल्म सम्राटों को लेखन-गुणवत्ता से सरोकार न था, उन्हें तो नफे से सरोकार था। अत: यहाँ उपन्यास सम्राट को मुम्बई के फिल्मसम्राटों से लोहा लेना पड़ा। फिल्म सम्राटों की धनलोलुपता उपन्यास सम्राट् को रास न आई और दूसरी ओर इनके द्वारा लिखी पटकथा पर आधारित फिल्में भी असफल रहीं, जिसके परिणामस्वरूप कंपनी की आर्थिक स्थिति डांवांडोल हो गई और कंपनी लगभग बंद हो गई। अन्तत: उन्होंने फिल्म नगरी मुम्बई से विदा ले ली और वापस काशी आकर अपने सर्वप्रसिद्ध उपन्यास 'गोदान' को पूरा किया जिसकी शुरुआत उन्होंने मुम्बई में ही की थी। इस काल तक प्रेमचन्द की गिनती हिन्दी साहित्य के सर्वोपरि साहित्यकारों में होने लगी। मुम्बई प्रवास के दौरान प्रेमचन्द ने इस बात को अच्छी तरह महसूस किया था कि विभिन्न भारतीय भाषाओं में एकता होनी चाहिए। उन्हें एक-दूसरे के

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com